आयुष्य कर्म का निर्धारण

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

हमारे जीवन में कर्म का बंध निरंतर चलता रहता है। मन, वचन और काया की प्रवृत्ति से विविध कर्म बंधते रहते हैं, परन्तु आयुष्य कर्म एक ही बार बंधता है। काल का छोटा सा छोटा भाग समय है। आत्मा जिस समय पर कर्म बांधती है, वही समय उस कर्म की ताकत, उसके फल सब उसी समय निश्चित हो जाता है। आत्मा जैसे कर्म से भाव बांधती है, उसी आधार से उसका फल तय हो जाता है। यद्यपि कर्म उपार्जन के बाद भी कुछ कर्म का बीज हम धर्म पालन से और प्रायश्चित द्वारा नष्ट कर सकते हैं। परन्तु कुछ निकाचित कर्म का बंध होता है, जिसे भोगना ही पड़ता है। एक मिनट के अशुभ विचार से अनंतानंत कर्मों का बंध हो सकता है। जिसका परिणाम यह होता है कि हम असंख्य वर्षों के लिए दुःख की परम्परा में बंध जाते हैं। बिना कारण किसी को दुःख देने से दुःख ही प्राप्त होता है। कोई कर्म शुभ या अशुभ फल के बिना छूटता नहीं है। आयुष्य का कोई पता नहीं कब समाप्त हो जाये और कर्म से बचने का कोई अवसर ही हमें न दें। इसलिए सदैव अच्छे कर्म हमें करना चाहिए।

आयुष्य कर्म क्या हैं? आयुष्य कर्म वे कर्म हैं, जो किसी भी जीव को एक गति में निश्चित अवधि तक बांध कर रखते हैं। आयुष्य कर्मपुद्गल स्कन्धों का समूह है। इसी के कारण जीव चारों गतियों में घूमता है। हमने पूर्वजन्म में जो कर्म किये हैं, उसे इस जन्म में भुगतना पड़ता है। सम्पूर्ण जड़तत्व का निर्जरण तब तक नहीं हो जाता, जब तक आयुष्य कर्म रहता है। आत्मा चिदानन्द स्वरूप अजर और अमर है। आयुकर्म के कारण जन्म लेने पर आत्मा जन्म–मरण के चक्र में

रहता है। इस जन्म में आयुष्य का बंध जब तक हम नहीं कर लेते, तब तक आत्मा इस शरीर में रहती है।

देव, नारक तथा असंख्येय वर्षजीवी मनुष्य और तिर्यंच वर्तमान जीवन का छः माह आयुष्य शेष रहने पर अगले जन्म का आयुष्य बांधते हैं। निरूपक्रम आयु वाले मनुष्य और तिर्यंच वर्तमान भव की एक तिहाई आयु शेष रहने पर अगले भव का आयुष्य बांधते हैं। सोपक्रम वाले जीव एक तिहाई भाग शेष रहने पर अथवा उत्तरोत्तर तीसरे भाग का तीसरा भाग अर्थात् छठा, नौवां, सताइसवां शेष रहने पर आयु बंध करते हैं। आयुष्य कर्म का बंध अर्न्तमुहुर्त के समय में हो सकता है। जैसे भाव होगें वैसे चारगतियों में किसी भी गति में आयुष्य कर्म का बंध हो सकता है। स्थिति, प्रदेश, अनुभाग इत्यादि के अनुसार कर्म बंधते हैं। हर योनि के जीव आयुष्य कर्म का बंध करते हैं।

नरकायुष्य बंध के चार हेतु हैं। महाआरम्भ, महापरिग्रह, पंचेन्द्रिय जीवों का बंध और मांसाहार के कारण नरकायुष्य का बंध होता है। तिर्यंच आयुष्य का बंध माया करने, छल करने, असत्य वचन बोलने के कारण होता है। इस संसार में मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जिसमें मन, बुद्धि, चेतना, विकसित अवस्था में है। चौरासी लाख जीव योनियों में मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जिसमें बुद्धि सबसे अधिक है। मानव जीवन धर्म करने के लिए प्राप्त हुआ है। मानव जीवन को प्राप्त करके भी जो मनुष्य इसे बुरे कार्यों में समाप्त कर देता है, उसे अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं। मनुष्य आयुष्य बंध के चार हेतु हैं। सरल प्रकृति होना, प्रकृति विनीत होना, दया का भाव करना, किसी से ईर्ष्या न करना। मनुष्य से उच्च गति देव योनि है। जो जीव सरागसंयम, संयमासंयम, तप और अकाम निर्जरा करता है, देव आयुष्य का बंध करता है।

जिस कर्म के उदय से जीव निश्चित अवधि की पूर्णता से पहले नरकभव से मुक्त होकर अन्य भव में नहीं जा सकता, उसे नरकायुष्य कर्म कहते हैं। जिस कर्म के उदय से जीव निश्चित अवधि की पूर्णता से पहले तिर्यंच भव से मुक्त

होकर अन्य भव में नहीं जा सकता, उसे तिर्यंच आयुष्य कर्म कहते हैं। जिस कर्म के उदय से जीव निश्चित अवधि की पूर्णता से पहले मनुष्य भव से मुक्त होकर अन्य भव में नहीं जा सकता, उसे मनुष्यायुष्य कर्म कहते हैं। जिस कर्म के उदय से जीव निश्चित अवधि की पूर्णता से पूर्व देवभव से मुक्त होकर अन्य भव में नहीं जा सकता, उसे देवायुष्य कर्म कहते हैं। जीव का अध्यवसाय तीव्र होता है तो वह एक ही प्रयत्न में आयुष्य का बंध कर लेता है। मन्द या मन्दतर हो तो दो से आठ तक आकर्ष करने पड़ सकते हैं। इनका कालमान अन्तर्मुहूर्त का होता है।

घाती और अघाती आठ कर्मों में आयुष्य कर्म की वर्गणा मात्र एक भव में भोगी जाती है। शेष सात कर्मों की वर्गणा एक भव या अनेक भवों तक भोगी जा सकती है। कर्मबंध में काल का निर्धारण होता है। उस काल में वह कितने भव करता है, इसकी निश्चित संख्या नहीं होती। परन्तु उस काल में जितने भव करता है, उतने भव तक उस कर्म वर्गणा को भोगता है। अल्पायुष्य कर्म का बंध जीव हिंसा, मृषावाद तथा श्रमण ब्राह्मण को अप्रासुक और अनेषणीय, अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य का दान करने के कारण करता है। जीव दीर्घायुष्य कर्म का बंध अहिंसा, सत्य, सत्याचरण तथा श्रमण ब्राह्मण को प्रासुक एषणीय, अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य के दान से करता है। मानव को अपने भावों को सदैव शुद्ध रखना चाहिए। भाव को नहीं बिगाड़ना चाहिए। भाव बंधने से भव बंधता है। राग–द्वेष के कारण भाव बिगड़ते हैं। इसलिए भावधारा को नहीं बिगाड़ना चाहिए।